आपका घर कैसा है?

हम सबने अनेक बार सुना होगा कि नारी चाहे तो स्वर्ग बना दे,चाहे नर्क,कहने के भाव से तो यही लगता है कि मानव के हाथ में वह क्षमता है कि घर को स्वर्ग जैसा भी बनाया जा सकता है।फिर भी हमें तो किसी का भी घर स्वर्ग जैसा आज तक नहीं लगा,आखिर लोग अपने घर को स्वर्ग जैसा क्यों नहीं बनाते? पर सोचने वाली बात है कि अगर यह बात कही जा रही है तो कभी नारियों ने घर को स्वर्ग जैसा जरूर बनाया होगा! पर आज नहीं बना पा रहीं हैं,नहीं तो कौन नारी अपने घर को स्वर्ग नहीं बनाना चाहेगी? वैसे घर के बारे में एक बात और भी है कि हरेक को अपना ही घर ही प्रिय लगता है।किसी को भी देख लो छोटे बड़े बूढ़े,यहाँ तक कि अन्य प्राणी भी अपने ही घर को ही प्राथमिकता देते हैं अपने घर को बड़े जतन से बनाते हैं,भले ही दूसरे के घर उनसे बहुत ही आलीशान क्यों न हों,परन्तु चित्त को चैन अपना ही घर देता है। शायद इसीलिए हरेक मानव संसार का सार समझ लेने के बाद अपने मूल घर को जाना ही चाहता है जिसके लिए वह सब कुछ छोड़ने को भी तैयार हो जाता है जिस घर का निर्माण उसने बड़ी लगन व मेहनत से किया था परन्तु वह असली घर समस्त चीजों से सहज ही वैराग्य दिला देता है कारण? कारण सिर्फ एक ही दिखता है आजादी,स्वतन्त्रता,स्वाभाविकता। यह बात जब हमारे घर में नहीं मिलती।घर में जब किसी मेहमान या किसी परिस्थिति की दखलंदाजी हो जाती है तो फिर कई बार अपना ही घर ठीक नहीं लगता कारण? तब घर में वह स्वाभाविकता नहीं रहती,घर मेहमानमय या परिस्थितिमय हो जाता है जिस कारण घर में सुख नहीं भासता, शान्ति नहीं प्राप्त होती।उदाहरण के लिए देखें एक 8 वर्ष का बच्चा भी अपने ही घर को ही वरीयता देता है। उसकी माँ एक अमीर घर में काम करती है वह एक आलीशान बँगला है जहाँ पर वह कभी-कभी जाता भी है परन्तु वरीयता वह अपने ही बसेरे को देता है भले ही वह एक साधारण सी झोपड़ी ही है किन्तु वह साधारण सी झोपड़ी आलीशान बँगले पर भारी है कारण? जबकि उस आलीशान बँगले में खाने की एक से बढ़कर एक चीजें,खेलने की भी बड़ी ही लुभावनी चीजें होती हैं जिनके पाने की लालसा उस बाल मन में सदा ही रही,थोड़ी देर तो वह उनको पाकर जन्नत पाने जैसा महसूस करता है उसकी खुशी का ठिकाना ही नहीं रहता है,उन सभी चीजों से उसे बड़ा मजा आता है परन्तु थोड़ी देर में ही वे बहुमूल्य चीजें फीकी लगने लगती हैं और वही अपनी साधारण सी झोपड़ी शानदार महल की तरह आकर्षित करने लगती है और सबसे मन हटाकर वह बस एक ही रट लगाता है कि अपने घर चलो-घर चलो.....क्यों? क्या कारण है जिन खिलौनों के लिए वह सदा लालायित रहा जिन पदार्थों की रसना का वह सदा ख्वाब देखता रहा,और आज जब वह सामने हैं तो मन उन्हें नजरांदाज कर,क्यों छोटी सी झोपड़ी को सर्वोच्च प्राथमिकता दे रहा है? मन को कोई रस क्यों नहीं खींच रहा? क्यों कोई खिलौना

आकर्षित नहीं कर रहा है? कारण सिर्फ और सिर्फ एक ही है यहाँ सब कुछ होते हुए भी स्वतन्त्रता नहीं है। हरेक खिलौना बहुत बढ़िया तो है पर साथ में यह हिदायत भी है कि ठीक से खेलना,देखो टूटे नहीं,यहाँ दौड़ना नहीं,यह चीज यहाँ न करना,ऐसा यहाँ नहीं होगा आदि-आदि तमाम बन्दिशें भी होती हैं जो बच्चे को अपने घर में नहीं होती हैं जिसके कारण ही उस अबोध बालक का मन आलीशान महल व झोपड़ी को एक ही तराजू में तौलता है और झोपड़ी वाला पलड़ा उसकी नजर में भारी दिखता है जिस पर आकर मन टिक जाता है।सुख की परिभाषा छोटे से बच्चे की नजर में भी बहुमूल्य चीजें नहीं हुआ करती,ना ही चीजों से किसी को सुख दिया ही जा सकता है।बहुमूल्य चीजें भी बन्धनों के कारण निम्न लगने लगती हैं,जैसे जेल में कैदी को खाना,कपड़ा,बात करना,सोना,सब तो मिलता है पर फिर भी वहाँ उसे वह जेल अर्थात सजा भोगने की जगह ही लगती है और कोई भी व्यक्ति जेल का नाम सुनते ही घबराता है परन्तु वहीं जेलर रोज बड़ी शान से कमाई करने उसी जेल में जाता है,जबकि वह भी कई तालों के अन्दर ही रहता है पर उसे वह भोगना वा सजा नहीं लगती बल्कि आय वा शान की जगह लगती है।मनुष्य ही नहीं हरेक प्राणी जन्म से ही आजादी चाहता है।अन्य के घरों में चीजें तो सब होती हैं पर आजादी नहीं होती है इसलिए वह आकर्षण नहीं पैदा करते,ठीक यही बात आत्माओं पर भी लागू होती है,यहाँ अनेक प्रकार के बन्धनों के कारण मनुष्य मुक्तिधाम जाना चाहता है।यहाँ माया ने सुख के साधन व पाम्प तो बना रखे हैं परन्तु मन के एक कोने में अपने असली घर जाने की एक अतृप्त चाहना हरेक रहती है पर आज के घर कैसे हो गये है? घर उसे कहा जाता था जहाँ अतिथि देवो भव,मातृ दवो भव,पितृ देवो भव अर्थात जहाँ अतिथि एवं माँ-बाप देव के समान माने जाते थे,परन्तु आज सिर्फ कहने आवास अर्थात आगन्तुकों के लिए आवास है परन्तु किसी भी अतिथि को भार ही समझा जाता है।सृष्टि के प्रारम्भ में जब सतयुग का समय था तब यही घर मन्दिर कहलाते थे,त्रेता के अन्त तक भी घर किसी मन्दिर से कम नहीं हुआ करते थे,द्वापरयुग में घर मन्दिर की जगह पाठशाला कहलाने लगे जहाँ बच्चे माँ-बाप के जीवन का अध्ययन कर अपने जीवन को शिक्षित करते थे,और कलियुग के आते-आते घर सिर्फ मकान रह गये और आज की स्थिति यह है कि मकान कहना भी अतिश्योक्ति ही होगी,इसे सराय या होटल या फिर अधिक से अधिक धर्मशाला कहा जा सकता है।जैसे होटल में अलग-अलग कमरों में अजनबी लोग रहते हैं सब कमरे में ही मिल जाता है,बगल वाले कमरे में कौन रहता है,व कौन किस काम से कहाँ से आया,बगल वाले को भी खबर नहीं,न कोई बात-चीत,सामने से निकलने पर भी कोई मतलब नहीं,कोई मुस्कान नहीं,यही हाल आज घरों का हो गया है,जहाँ बच्चे जब सुबह उठकर स्कूल कॉलेज जाते हैं तब तक माँ-बाप सोये रहते हैं जब रात को माँ-बाप घर आते हैं तब तक बच्चे सो चुके होते हैं। अगर देर तक पढ़ने वाले बच्चे नहीं भी सो रहे होते हैं तो भी किसी को किसी से बात करने का समय ही नहीं है।एक प्रतिष्ठित कम्पनी के महाप्रबन्धक की युगल हमें बता रही थीं,कि मुश्किल से आधा घण्टे समय बच्चों के साथ मिल पाता है और एक माता बता रही थी अगर हम 6 बजे उठेंगें तब तो

हम मर ही जायेंगें बच्चे कब स्कूल गये हमें पता नहीं पड़ता। मॉ–बापदोनों नौकरी करते हैं,थक हार कर जब रात को घर पहुॅचते हैं,प्राइवेट कम्पनियों में कार्यरत व्यक्ति शाम को पॉच बजे नहीं,9 या 10 बजे जब कार्य से छूटते हैं घर पहुॅचते–पहुॅचते 11 बज जाते है,घर आकर जैसे–तैसे काम निपटाकर जल्दी सोना है क्योंकि सवेरे फिर वही भाग दौड़ की दिनचर्या होनी है तो न ही साथ बैठकर बात करने की है और न ही समय और न ही कोई अति स्नेह का सम्बन्ध व विचारों का सामान्जस्य,बस किसी तरह दो चार घंटे का सोना ही कहेंगे, आराम तो कहीं से भी नहीं कहेंगें,तो बच्चों को मॉ–बाप की पालना का कैसा अनुभव? बच्चों को पालना एक अति छोटा कार्य समझ कर उसे कैसे भी और कोई भी कर सकता है,इसलिए छोटे बच्चे केश में पलते हैं फिर हॉस्टल में पढ़ते हैं या जब तक केश नही लेता तब तक बच्चा कभी दादी के घर या नानी के घर या फिर किसी भी तरह की मेड रख लेते हैं। मॉ–बाप दोंनो बात–बात में कहते रहते हैं कि बच्चों के लिए हम लोग दिन रात कितनी मेहनत करते हैं और आपका बच्चा कैसे पल रहा है? क्या खा रहा है? कया संस्कार सीख रहा है आपको क्या पता?

तो बच्चा तो अपने टीचर से या अन्य से कहता होगा,मैंने मॉ को देखा है मॉ का प्यार नहीं देखा,वैसे तो मेरे कमरे में भी मॉ की एक बड़ी सी तस्वीर लगी है नौकर से शायद कभी मेरा हालचाल लेती हो पर मेरे से कब बात हुई थी मुझे ठीक से याद नहीं आ रहा है,फिर कोई अपेक्षा रखे कि बच्चा बड़ा होकर श्रवण कुमार बनें तो यह सबसे बड़ी भूल होगी।वह सिर उठाकर कह सकता है कि आपने हमारे लिए सिर्फ पैसा कमाया है और वही लगाया है,मैं भी आपको पैसा दे सकता हूॅ पर मेरे पास आपके लिए समय नहीं है।फिर बूढ़े हो चले मॉ–बाप किस अधिकार से बच्चों से समय लेना चाहते हैं? बड़े ही आश्चर्य की बात है कि पहले परिवार का एक सदस्य कमाता था और पूरा परिवार खाता था,और आज घर का हर सदस्य नौकरी करता है लाखों रूपये कमाते हैं फिर भी महीने के अन्त तक जेब खाली हो जाती है क्या इसे घर या परिवार कहना ठीक लगता है या फिर कहा जा सकता है? पहले गृहस्थ को आश्रम कहा जाता था।आश्रम तपस्या के लिए होता है।पहले यहॉ गृहस्थ को भी तपस्या माना जाता था।बच्चे को पालना एक तपस्या होती थी,बच्चे को पालना सिर्फ उसे खाना कपड़ा देना,शिक्षा दिलवाना,यही पालना नहीं है,बच्चे को एक योग्य गुणवान समाज का जिम्मेवार नागरिक बनाना बहुत बड़ी जिम्मेवारी है।आज के घर को मकान या सराय भी नहीं कहना चाहिए,क्योंकि जो खाने योग्य नहीं वह खाया जाता है,जो पीने योग्य नहीं वह पिया जाता है,जो देखने योग्य नहीं वह देखा जाता है न करने योग्य कार्य किये जाते हैं,आज घर सिनेमाहॉल बन गये हैं या फिर वैश्यालय अथवा महाभारत का कुरूक्षेत्र बन गया है,जहॉ विचारों का शीतयुद्ध एक दूसरे के साथ दिन रात सदा ही चलता रहता है।आखिर यह इतना अन्तर क्यों? सतयुग–त्रेतायुग में भी ऐसे ही शरीर वाले लोग इसी प्रकृति के बने घरों में रहते थे,बनाने वाले भी यहॉ के जैसे होते थे।हमारे विचार से अन्तर स्थान व पदार्थो या चीजों का नहीं बल्कि वहॉ रहने वालों लोगों का होता है जैसे किसी मंदिर में एक छोटी सी

मूर्ति होती है और साथ ही रहता है पुजारी का पूरा परिवार परन्तु वह मंदिर कहलाता है न कि पुजारी का घर,किसी के पूँछने पर पुजारी कहता कि मैं मंदिर में रहता हूँ न कि मेरे घर में मेरे साथ एक देवी की मूर्ति भी रहती है,उसका एक मात्र कारण पुजारी का जीवन मंदिर की मूर्ति के अनुसार एवं मंदिर की मर्यादा अनूसार ही चलता है। सारे मंदिर में में भले पुजारी का परिवार रहता हो परन्तु मंदिर में आध्यिात्य मंदिर में बैठी छोटी सी मूर्ति का ही रहता है जबकि मूर्ति जड़ और पुजारी चैतन्य कारण? कारण मूर्ति के चैतन्य जीवन की पवित्रता की शक्ति है वह पवित्रता की पॉवर अभी तक प्रभाव डाल रही हैं पवित्रता की शक्ति के आगे सब गौड़ हो जाता है। पवित्रता की खुशबू अभी तक उसकी मूर्ति को भी वैल्यूएबुल बनाये हुए है।जबकि यहॉ एक रहे या दो पर उसको मकान ही कहा जाता है।

बात मनुष्य की नही,बात मनुष्य की क्वालिटीज का है,बिना सद्गुणों के मानव भी दानव व साधारण दो कौड़ी कहलाता है इसी कारण आज के घर मनुष्य के सद्गुणों व अवगुणों की कहानी व्यक्त कर रहें हैं। दूसरी बात नयी चीज हमेशा निश्चिन्तता प्रदान करती है जिससे मनुष्य सुख महसूस करता है।जैसे भगवान जब नई सृष्टि रचते हैं तब हम 2500 वर्ष निश्चिन्त रह सुखी रहते हैं,फिर प्रकृति पुरानी होती गई,कलियुग के आते-आते प्रकृति भी तमोप्रधान बन गई,इसलिए अब भले इससे कोई भी नई चीज बनाई जाती है पर वह नवीनता का सुख प्रदान नहीं करती कारण क्या? कारण एक ही है जैसे कोई पुराने मैटीरियल को गला -गला कर भले ही कोई नई भले ही बनाई गयी हो पर मैटीरियल तो पुराना ही था इसलिए वह कहने मात्र नया होता है।क्षणिक ही नवीनता का सुख देता है।तुरन्त ही कुछ न कुछ गड़बड़ होने लगता है।दूसरा कारण सतयुग में पवित्र मॉ-बाप रहते थे इसलिए वह घर मंदिर समान कहलाता था।द्वापर में भी मूल्यनिष्ठ समाज का हित चाहने वाले मॉ-बाप रहते थे जिसके कारण बच्चे के लिए घर एक पाठशाला के समान होता था,पर आज का मानव मशीनों के द्वारा पैदा होकर,मशीनों द्वारा पलते-पलते,मशीनों के द्वारा पढ़ते-पढ़ते,मशीनों के साथ रहते-रहते वह भी मशीन बन कर रह गया है,साथ-साथ आत्मा शक्तिहीन होने के कारण विकारी मानसिकता बनती गयी,इस कारण आज घर नहीं मकान या सराय कहना ज्यादा उचित रहेगा,पर भगवान आज भी मकान से घर तो क्या,पाठशाला से आगे मन्दिर बनाने की शिक्षा दे रहे हैं।अपने जीवन को परमात्मा मत पर पावन श्रेष्ठ मूल्यवान जीवन बनाकर अपने घर में अपने जीवन द्वापर एवं शिव संदेश देकर अनेकों का जीवन भी मंदिर जैसा बना सकते हैं।अपना घर चैतन्य देवालय बनायें जहॉ देवताओं का निवास नहीं देवताओं का निर्माण हो। तो मेरे प्रिय भाइयों एवं बहनों अपना घर चेक करे कि आपका घर कैसा है? ओम शान्ति ।

ब्र0 कु0 सुमन
जानकीपुरम विस्तार लखनऊ